भूमिका

'सन्त बाल' अथवा जैन मुनि सन्तबाल का नाम वर्तमान
गुजरात और महाराष्ट्र राज्यों में ही नहीं, भारत वर्ष के अहिंसक
…नि में कार्य करने वाले रचनात्मक कार्यक्षेत्रों और कार्यकर्ताओं
दीर्घ समय से सुपरिचित और प्रतिष्ठित हैं। वे जैन साधु के
र ही पदयात्रा करते हैं। उन की दृढ़ धारणा है कि जनहितकारी
साधुत्व सत् प्रवृत्तियों को सक्रिय प्रेरणा से जैन साधु के
नियमों का उल्लंघन नहीं होता। उन्होंने युग की आवाज को सुना
और उसे हृदय पटल पर उत्कीर्ण किया है। वे मानते हैं कि जैन
श्रमणों को नवनिर्मित परिधि से बाहर आ कर धर्म दृष्टि से नवीन
समाज रचना का प्रयोग करना ही चाहिए। महात्मा गांधी
के सत्य और अहिंसा के विविध प्रयोगों ने अहिंसा भगवती का क्षेत्र
व्यापक बनाया है। जैन श्रमणों के पास तप व त्याग की आदर्श
परम्परा है। अतः नूतन समाज रचना और वास्तविक विश्व शान्ति
की स्थापना में वे आदर्श और अनुकरणीय कार्य में हर दृष्टि से समर्थ
हैं। उन की [illegible] विचार धारा और जैन साधुत्व की मर्यादा विषयक
मान्यताओं में शायद किसी का मतभेद संभव हो, परन्तु उन का क…
हस्तामलकवत् स्पष्ट है।

वे आदर्श कार्यकर्ता ही नहीं, गंभीर विचारक और धर्मशा…
मर्मज्ञ भी हैं। उन की वाणी में ओज है, लेखनी में प्रभावोत्पा…
है, भाषा में प्रवाह है और व्यक्तित्व में तेज है। गुजरा…
उन्होंने विशाल साहित्य लिखा है। कतिपय जैनागमों का भी …
किया है और उन पर टीकाएं लिखी हैं। 'विश्ववात्सल्य' औ…
मानवी' नामक गुजराती पत्रिकाओं में उन के लेख विभिन्न …
पर प्रकाशित होते रहते है। उन्होंने जो साहित्य लिखा है …
'ब्रह्मचर्य साधना' नामक पुस्तिका भी है। गुजराती में …
संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं।

इन की उदारता और सेवा भावना पाठकों को सत्प्रेरणा देगी, ऐसी आशा है।

भारत में ब्रह्मचर्य की प्रतिष्ठा सनातन काल से ही रही है। ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले महात्मा और योगी प्रत्येक भारतीय के श्रद्धा और सन्मान के पात्र रहे हैं। गुरु वल्लभ स्वयं बाल ब्रह्मचारी थे और उन्होंने ब्रह्मचर्य को सर्वोच्च स्थान दिया है। उन्हों ने चरित्र पूजा की रचना की है जिस में वे लिखते हैं।

"ब्रह्मचर्य तप से मिले मोक्ष परम् पद धाम,
चतुराश्रम में मुख्य है ब्रह्मचर्य का नाम।"

वे मानते थे कि ब्रह्मचर्य के बिना कोई भी साधु मान प्राप्त नहीं कर सकता। ये कहते हैं—

"ध्यानी, मौनी, वल्कली, मुण्ड, तपस्वी जान।
ब्रह्मा भी ब्रह्महीन हो तनिक न पावे मान॥"

याज्ञवल्क्य स्मृति के आधार पर इसी विषय में उन का यह भी कथन है :—

"सेवे मैथुन होयके दीक्षित जो नर नार।
विष्ठा का कीड़ा बने हायन साठ हजार॥" (हायन—वर्ष)

जैन शास्त्रों में ब्रह्मचर्य की महिमा का सर्वत्र गुणगान किया गया है। प्रश्न व्याचारांग व्याकरण वृत्ति में स्पष्ट उल्लेख है कि आर्हतों (तीर्थंकरों के अनुयायी) के लिये मैथुन त्याग के अतिरिक्त एकान्त से न तो कुछ प्रतिषिद्ध है और न अनुज्ञात। जैन धर्म सम्मत तप निर्जरा और क्रमश. मोक्ष का साधन है और तप में सर्वोत्तम ब्रह्मचर्य ही है यह सूत्र कृतांग का कथन है। जैनागमों में 'बंभं भगवन्तं' माना गया है। ब्रह्मचर्य के आराधक को देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और किन्नर तक नमस्कार करते हैं।

हिन्दू धर्म में भी यह माना गया है कि:—

'एकतश्चत्वार: वेदाः ब्रह्मचर्यं चैकत:' इस के अतिरिक्त यह भी कहा गया है 'व्रतानां ब्रह्मचर्यं हि निर्दिष्टंगुरुकं' अर्थात् सभी व्रतों में

ब्रह्मचर्य साधना

"सौन्दर्य का मूल"

गगन में नीलवर्ण घन मंडरा रहे हैं। संध्या की वेला है। सूर्य की मन्द मन्द किरणें विकसित हो रही हैं। इस समय का इन्द्रधनुष कितना मनोहर होता है? चक्षु निर्निमेष दृष्टि से इस को निहारते ही रहते हैं।

सर्दी की ऋतु है। गोधूम के हरियाले क्षेत्र लहलहा रहे हैं। मेघगर्जन हो रहा है। दर्भ (कुश) पर ओस बिन्दु टपक रहे हैं, मानो मूल्यवान मोती.........

वसन्त की ऋतु है। लतामण्डप हैं। विविध प्रकार के वृक्ष हैं। रंगबिरंगे पुष्प विकसित हो चुके हैं। केवड़ा, चम्पा, चमेली, जाई और जुईनी की सुगन्ध चहुं ओर फैल रही है। चित्ताकर्षक गुलाब के फूल हैं। मानो ये सब प्रकृति रूपी रमणी का अद्भुत लावण्य।

प्रिय पाठक वृन्द! विचार करो कि ये सब हैं किन्तु नेत्र ही न हों तो? नेत्र भी हैं परन्तु मन न हो तो? मन और चक्षु के होने पर भी यदि सृष्टि सौन्दर्य निरीक्षण की रसवृत्ति कुण्ठित हो तो? इन सब की विद्यमानता में चित्त प्रसन्न न हो तो? एवं आत्मा ही स्वस्थ न हो तो?

ब्रह्मचर्य व्रत सब से महत्वपूर्ण है। पातंजल योग सूत्र में कहा ग
"ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायां वीर्यलाभः" अर्थात् ब्रह्मचर्य की साधना से
तेज अथवा शक्ति उपलब्ध होती है। वर्तमान युग में हम भ
वाद की ओर इतने अधिक झुक गये है कि सदाचार और ब्रह
की प्रायः उपेक्षा ही हो गई है। गृहस्थ जीवन में भी मर्यादित ब्रह
का पालन वीर्य, शक्ति एवं ओज का स्रोत है। इसे हम ने वि
कर दिया है। सदाचार की दृष्टि से जिस भारत का ललाट
हिमालय के समान उन्नत था; आज उस देश में अबोध बालिक
पर भी बलात्कार के हृदयविदारक समाचार पढ़ कर क्या वह
से झुक नहीं जाता? हमारा आहार, व्यवहार और आचार वि
हो चुका है। उपनिषदों में घोषणा की गई थी कि "अन्नमयं
सौम्य मनः" अर्थात् हमारा मन हमारे भोजन-तत्वों से ही बनता
आज सात्विक भोजन की प्राप्ति एक समस्या है। अश्लील च
चित्रों और विज्ञापनों ने जलती में घृत का कार्य किया है।
पश्चिम को हम अपने आधुनिक जीवन का आदर्श मानते हैं उस
विषय में एक ही घटना का उल्लेख हमारी आंखें खोल
२४-२-१९५८ के नवभारत टाइम्स में यह समाचार प्रका
हुआ था कि प्रतियोगिता में पुरस्कृत भारत की "पथेर पंचा
फिल्म को न्यूयार्क के छविगृहों में प्रदर्शित करने की आज्ञा इस
नहीं दी गई थी कि उस में यौन-भावना (Sex) को उत्तेजित क
वाली कोई वस्तु न थी।" यह भी समाचार प्रकाशित हुआ है
१९५९ में जापान में ५० हजार छात्र इस लिये गिरफ्तार किये
कि उन्हों ने युवतियों पर बलात्कार किया।

ऐसे दूषित और नैतिक अधःपतन के वातावरण में ब्रह्मच
सन्तों द्वारा लिखित इस प्रकार की पुस्तक भारत की आधुनिक पी
का उचित मार्ग दर्शन कर सके, उसे पतन के गर्त में गिरने से ब
सके तो हमारा यह प्रयत्न सार्थ कहोगा।

२३ मई १९६१ — पृथ्वीराज जैन एम०ए० शास
ज्येष्ठ शुदि अष्टमी

हां तो अन्ततः कहना ही पड़ता कि ये सब आत्मा ही है। सारांश यह है कि सौन्दर्य का मूल चित्त की प्रसन्नता ही है। सौन्दर्य का मूल आत्मा की स्वस्थता ही है। जैसे सौन्दर्य का मूल यह है वैसे ही चेतनशक्ति, अगम्य आकर्षण, भव्य ओजस् तथा अनुपम रमणीयता इत्यादि सभी का मूल यही है। इसी लिये कहा है कि—

सौन्दर्य प्रिय ! तुम द्वार खोलो, मुझे रूप में दर्शन दिखा दे तू।
उच्छिष्ट और ऊपर के मलिन, लिबास से नौतन तू बना॥
निर्लेपता हाथ अब प्रसारो, संभाल ले स्नेह सारी हमारी।
विज्ञान का अंजन लगा प्रिये ! अज्ञान अंधी पटल (पर्दा) उठाके॥

एक रूपवान् नवयुवक है। केश घुंघराले हैं। मनमोहक परिधान (पोशाक) धारण किये हुए है तथा ग्रीवा में सुन्दर टाई लगी है। शरीर हृष्ट पुष्ट है परन्तु उस नवयुवक को इन समस्त रमणीय वस्तुओं का अतीव घमण्ड था। एक तत्त्वद्रष्टा ने उस से पूछा 'तेरे में यह सब किस कारण प्रतीत हो रहा है' क्या तू जानता है ? मनोहर प्रतीत होने वाली इस तेरी काया में से यदि एक आत्मा ही निकल जाये तो (यदि आत्मा ही न रहे तो)? युवक विचारने लगा और अन्ततः उसे विदित हुआ कि मैं जिस के लिये गर्विष्ठ बना हुआ हूं वह तो केवल हाड़, मांस और मज्जा का कंकाल मात्र ही है। जिस के लिये मुझे गर्व करना चाहिये वह आत्मा तो अहंकार रूपी दुर्गुण से कलुषित बन चुका है। इस विचार से उस युवक को सौन्दर्य के मूल की प्राप्ति हुई और वह वास्तविक रूप से सुन्दर बन गया।

उसने सौन्दर्य का मूल प्राप्त किया…… ..

जिस ने सौन्दर्य का मूल प्राप्त कर लिया उस ने सर्वस्व प्राप्त कर लिया। मानो बाह्य दृष्टि से देखे जाने वाले विश्व के कुरूप दृश्य

न प्रकार के सौन्दर्य अवलोकक के लिये अति रमणीय प्रतीत होते । उस का हृदय जिस प्रकार पुण्यात्मा में उसी प्रकार रात्मा में भी प्रच्छन्न रूप से छिपे सौन्दर्य को देखता है। जहां हां चैतन्य है वहां वहां उस को यह सौन्दर्य षोडश कला सदृश चन्द्रमा की सोलहों कलाएं मानी गई हैं) देदीप्यमान प्रतीत होता । वह सर्वत्र ज्ञानमय आनन्द महासागर को तरंगित होता हुआ खता है। इसी का ही नाम योग है। गीता में कहा है "सर्वथा र्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते" अर्थात् सर्व प्रकार से सांसारिक ार्यों में व्यस्त रहता हुआ भी वह योगी वास्तविक रूप से मेरे सम्पन्न है।

——:o:——

"ब्रह्मचर्य"

किसी भी साधना की आराधना करने से पूर्व बुद्धिमान् मानव ो प्रथमतः इस बात की जिज्ञासा होती है कि वह क्या है और किस नये है ? इस नियम के अनुसार ब्रह्मचर्य व्रत का प्रश्न साधक के म्मुख रखने पर, वह पूछेगा कि ब्रह्मचर्य व्रत किस लिये ?

किन्तु पूर्ववर्णित सर्वश्रेष्ठ योग का साधन ब्रह्मचर्य ही है। अतः ब्रह्मचर्य किस लिये यह प्रश्न ही नहीं उठ सकता।

सामान्य रूप में योग का अर्थ है 'एकाग्रता' अर्थात् 'चित्त की एकाग्रता'। यह एकाग्रता ब्रह्मचर्य के बिना प्राप्त नहीं हो सकती है।

योग का दूसरा अर्थ आत्मा के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध होना है। ब्रह्मचर्य के बिना इस संसर्ग का होना नितान्त असम्भव है।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

मन, वचन, [illegible] है।

[illegible] ब्रह्मचर्य साधक [illegible] को निरीक्षण [illegible] का सहज द्रष्टा हो सकता है।

द्रष्टा का अपूर्व साधन.........

वस्तुतः यह (ब्रह्मचर्य साधना) साधन आत्मा को सहज द्रष्टा बनाने के लिये ही है। और इस दृष्टि से ही ब्रह्मचर्य अपूर्व साधन माना जाता है।

अखण्ड ब्रह्मचर्य किसे कहते हैं.........

अब प्रश्न यह होता है कि अखण्ड ब्रह्मचर्य कहते किसे हैं? शारीरिक—शरीर रूपी—यन्त्र का सूक्ष्म व्यवहार कार्य भी आत्म जागृति—आत्म स्मृति से विमुख होने वाला न हो ऐसा अथवा उस शरीर में विद्यमान पुरुष ही पूर्ण ब्रह्मचारी कहा जाता है अर्थात् पूर्ण ब्रह्मचर्य का व्रतधारी कहा जाता है।

अकृत्रिम—स्वाभाविक रूप से बलात् यत्न बिना ऐसी अवस्था को प्राप्त करना ही अखण्ड ब्रह्मचर्य की सिद्धि मानी जाती है।

टीकरण के लिये नीचे लिखे दो दृष्टान्त देखिये ···

प्रथम दृष्टान्त ···

(क) एक वेश्या का निवास स्थान है। वेश्या का नाम
ता है अथवा यूं कहिये कि गृह की नायिका का नाम कोशा है।
। और अभिनय उस के हैं! कटाक्ष मात्र से वीर को भी
लित करने वाली ···

आज वह बहुमूल्य वस्त्रभूषणों से सुशोभित—अलंकृत है। शरीर
त्येक अंगोपांग से मानो शृंगार रस ही टपक रहा है। ऐसा
त होता है मानो साक्षात् रम्भा (कामदेव की स्त्री) ही न हो।

निवास स्थान के समीपवर्ती भाग में ही एक अद्भुत पुरुष है।
जैन श्रमण-साधु होने पर भी वेश्या गृह में वास कर रहा है। साधु
अपने गुरु से वेश्या के गृह में रहने की आज्ञा मांग ली है। यह भी
न् आश्चर्य है। साधु के निवास स्थान में विविध प्रकार के कामो-
क चित्र विद्यमान हैं। साधु के नेत्रों के समक्ष कोशा खड़ी है।
ा के मदोन्मत्त नेत्रों से तीक्ष्ण बाण गिर रहे हैं। किन्तु उस महान्
क का एक भी रोम उस की ओर आकृष्ट नहीं हो रहा है। उफ़!
ना महान् आश्चर्य है।

अन्ततः कोशा पराजित हो जाती है और विजय साधु की होती
कोशा वेश्या महान् विस्मय रूपी जलधि में निमग्न हो रही है।
वेशा मन में सोचती है) "पूर्वाश्रम में अर्थात् जिस समय यह मन्त्री
कहलाता था उस समय मेरी ही इस सुन्दर काया पर मुग्ध था।
ज इस ने चारित्र ग्रहण कर कौन सी सिद्धि प्राप्त कर ली है जो
कामोत्तेजक प्रसंग में भी मेरुगिरि सदृश निश्चल बना हुआ है।"
श्चर्य चकित कोशा की विचारधारा इस से आगे बढ़ने में समर्थ न

हो गयी। कोशा चरणों में गिर पड़ी और अवसरज्ञ मुनि ने
बात सुनानी प्रारम्भ की। "कोशा ! इस में विस्मय की बात [illegible]
नहीं है। जो है वही है–जो था वही हूं इस में नूतन कुछ भी नहीं
जब मैं ने 'सौन्दर्य के मूल' को नहीं प्राप्त किया था, तब [illegible]
शारीरिक लावण्य को ही वास्तविक सौन्दर्य समझता रहा। [illegible]
[illegible] से भली प्रकार परिचित हो गया हूं। अतः कृत्रिम [illegible]
[illegible] नष्ट भ्रष्ट हो गया है और वास्तविक आत्मानुराग [illegible]
प्रगट हो गया है।"

ब्रह्मचर्य का चमत्कार

यदि विश्व में कोई [illegible] चमत्कार है तो [illegible]
के हृदय में परिवर्तन हो जाना।

ऐसे परिवर्तन को [illegible] है। [illegible]
चमत्कार को ही नमस्कार करना [illegible] है। [illegible]
के कारण ही [illegible]
था। [illegible]
में किसी भी प्रकार की [illegible] नहीं [illegible] थी। [illegible]
नवविवाहित युवकों को मृत्यु के घाट उतारा था। [illegible]
पारावार ही न था। [illegible] युवकों को [illegible]
मयी धूल में मिला दिया था।

इस प्रकार चोरी, हत्या, मांसाहार, आदि अनेक पापकर्मों में
ही अपनी शक्ति का दुरुपयोग किया करता था। परन्तु वह भी
पापी से वीर एवं संहारक से संरक्षक बना। मीरा ने भी एक बार
कामासक्ति से पीड़ित नर को ब्रह्मचर्य के प्रभाव से ही सं
बनाया था।

इस प्रकार एक नहीं अपितु अनेक दृष्टान्त प्राप्त हो सकते हैं।
राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी में जो आकर्षण था उस का मूल कार
और क्या था।

अन्य चमत्कार..........

सभी चमत्कार आध्यात्मिकता के ही छाया रूप हैं, और
ब्रह्मचर्य के विना आध्यात्मिकता सम्भव ही नहीं। सामान्य चमत्कार
जो सृष्टि में दृष्टिगोचर होते हैं उन का कारण भी यही है।

अशोक वाटिका में असहाय सीता को रावण जैसा-शक्तिशाली राक्षस भी विचलित करने में असमर्थ रहा। यह शक्ति किस की? सीता की नहीं अपितु सीता के शील व्रत की ही। यह भी तो प्रसिद्ध घटना है कि अग्नि भी सीता को जला न सकी थी। लक्ष्मण का भी अलौकिक बल चतुर्दश (१४) वर्ष के अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत के कारण प्रकट हो सका था। नवोढा उर्मिला के त्यागी लक्ष्मण की प्रशंसा की जाए अथवा पतिसहचार से वंचित उर्मिला के महात्याग की। और यह साधना भी कैसी? *सीता के मुख तक को भी न देखा था। धन्य है, तुम्हारी ब्रह्मचर्य निष्ठा को!

लक्ष्मण तो विवाहित थे अतः वे मूर्छित हुए, सीता भी विवाहिता थी, शायद इसी लिये उस का अपहरण हुआ। किन्तु हनुमान जी तो जीवन पर्यन्त ही अविवाहित रहे थे। यानी नैष्ठिक ब्रह्मचारी ही बने रहे। इसी लिये पर्वत को उठा कर लाये थे। इसी हेतु उन का सामर्थ्य कभी भी पराभव को प्राप्त नहीं हुआ था।

आधुनिक युग के स्वामी रामतीर्थ को कौन नहीं जानता। वे इतने बलशाली बन चुके थे कि उन्होंने गुफा और पर्वतों को केवल वाणी के प्राबल्य से ही कम्पित कर दिया था। ऐसे ही सती राणक देवी की वाणी ने गिरनार पर्वत को हिलाया था। यह बात किस से अप्रसिद्ध है।

जूनागढ़ के सुप्रसिद्ध राजा की दृष्टि, नागबाई की पुत्रवधू पर विकारमयी हो गई थी जिस से उस का महान् अधः पतन हुआ था। राजा खेंगार और गुजरात के सिद्धराज के परस्पर घोर युद्ध का कारण राणक देवी ही थी।

जूनागढ़ में प्रान्तीय राजा को मोणिया जाति के चारणों ने आमन्त्रित किया। नागबाई आदि चारण-पत्नियों ने राजा का कुंकुम

*सीता के चरणकमलों के निकट दिन रात निवास करने वाले लक्ष्मण ने

वह ग्रामों की पिछड़ी जाति, अशिक्षित एवं निर्धन वर्ग की माता बनी। वह भी ब्रह्मचर्य का ही प्रभाव है।

तुम विश्व के किसी भी क्षेत्र के विजेता की ओर निहारो। उस में भी तुम को ब्रह्मचर्य का ही अपूर्व प्रभाव दृष्टिगोचर होगा।

फ्रांस के विजयी इतिहास में जोंदार्क अर्थात् ब्रह्मचारिणी, "जोन आफ आर्क" का नाम भी गौरवान्वित है। ग्रामीण एव अशिक्षित होते हुए भी महाबलशालिनी तथा बुद्धिमती उस सोलह वर्ष की सुकुमारी ने अनेक कायर व्यक्तियों में वीरता का संचार किया। और सेनापति के पद पर आरूढ़ रहते हुए फ्रांस को अविचल रखा।

क्या भारत में अखण्ड ब्रह्मचर्य के पालन के माध्यम से वैधव्य सुशोभित करने वाली एवं प्राप्त विजया झांसी की रानी लक्ष्मी बाई तथा अहल्याबाई के उदाहरणों की कमी है ?

जर्मनी के भूतपूर्व अधिनायक को ही देखो। उस की शक्ति का प्रवाह हिंसक युद्ध की ओर अग्रसर हुआ। यद्यपि वह हानिकारक था। तथापि उस प्रवाह का मौलिक कारण अनायास आचरित ब्रह्मचर्य ही था। उस का कौन निषेध कर सकता है।

बंगाल के महान् राष्ट्र सेवक एवं उस समय की राष्ट्रीय महासभा के माननीय प्रमुख सुभाष चन्द्र बोस की राष्ट्र सेवा में किस का हाथ था। किसी भी सेवानिष्ठ की ओर अथवा आत्मसाधना और धर्म साधना के साधक की ओर देखो। उस में भी तुम को ब्रह्मचर्य निष्ठा ही उपलब्ध होगी। भगवान् ईसामसीह भी नैष्ठिक ब्रह्मचारी थे। उन के द्वारा प्ररूपित धर्मध्वज के नीचे मानव सृष्टि का प्राय तिहाई भाग विद्यमान है।

[illegible]

[illegible] ।

[illegible] ! [illegible] ब्रह्मचर्य भावना को ह
[illegible] और तुम्हारे में एक
[illegible] प्रस्फुटित प्र
[illegible] । तुम्हारे इतस्ततः के वातान
[illegible] पड़ती है और लोग तुम्हारी ओर आकृष्ट ह
जगत् तुम को महान् आशा और विश्वास की दृष्टि से देखने
है । माताएं तुम्हारे इस तेज का स्वागत करके आशिष ह
करती है । तुम्हारे में प्रेम का ईश्वरीय तत्त्व विकसित होना
हो जाता है जोकि तुम्हारा मौलिक केन्द्र स्थान है । तुम्हारं
बिखरी हुई शक्तियां केन्द्रित होने लग जाती हैं । इस में तु
कोई अलौकिक उत्साह व्याप्त हो जाता है । चमत्कारिक व
होता है । एवं अनन्य उल्लास की लीनावस्था का तुम को
अनुभव होने लगता है । परमात्म-प्रेरणा तुम्हारे में क्रमशः
लेती है और तुम विश्व विभूतियों की अवलि में आ बैठ
तुम्हारे लिये सत्य साधना सुलभ बन जाती है । तुम नि
और निःस्पृहता के कारण निर्भय बन जाते हो निर्मलता और
के क्रमशः विकास से तुम प्रेम के पात्र बन जाते हो । तुम्हारा
जीवन विश्व के लिये आदर्श रूप बन जाता है । तुम्हारा
आनन्द विश्व जीवन का परमानन्द—परम जीवन हो जात
तुम्हारे प्रेम सिन्धु को देखने के लिये अनेक अस्त व्यस्त निर्झ
एकत्रित हो कर सनातन पथ पर प्रवाहित होने लग जात
सारांशतः तुम स्वयं महानियम के अडिग संचालक तथा
परमात्म रूप बन जाते हो और तुम्हारे में यह ब्रह्मतेज की
विस्तृत हो जाती है ।

निहित समझो ...

ब्रह्मचर्य यह योग की अनाहत ध्वनि है।
ब्रह्मचर्य मोक्ष मार्ग का अद्वितीय पथ प्रदीप है।
ब्रह्मचर्य परम देवाधि देवता द्वारपाल है।

ब्रह्मचर्य परम प्रकाश का अक्षय ज्योति पुंज है।

ब्रह्मचर्य ही आत्मरूपा सिन्धु का आलिंगन करने वाली महान् सरिता है।

ब्रह्मचर्य ही जीवन और जगत् के महाविनाश को रोकने वाला अवलम्बन है।

ब्रह्मचर्य ही संसार के मायाजाल से छुटकारा दिलाने वाला महामन्त्र है।

एक ओर वैदिक सिद्धान्त रखो और दूसरी ओर ब्रह्मचर्य की महिमा ...

ब्रह्मचर्य का ही पलड़ा भारी होता है और विजय भी ब्रह्मचर्य की ही होती है। विश्व की सभी सिद्धियां, समृद्धियां एवं स्वर्ग लोक की सर्व विभूतियां एक मात्र ब्रह्मचारी के ही चरणों में लोटती हैं।

जहां २ ब्रह्मचारी के पवित्र चरण पड़ते हैं वहां २ पुण्य पुंज वर्धित हो जाता है। पापी लोग भाग जाते हैं और आनन्द मंगल प्रस्फुटित हो जाता है।

युग युग जिये ; यह ब्रह्मज्योति ?

विकारमयी प्रेम की घटनाएं सुनने में आती हैं। कितने ही मोहान्ध युगल–दम्पती आत्मघात भी कर लेते हैं। गुप्त अनाचार, गर्भपात, अकृत्रिम सन्तति निरोध, सृष्टि विरुद्ध कर्म, आम जनता के आने जाने के मार्ग पर बने हुए वेश्या-गृह ये सब मूकभाषा में क्या कह रहे हैं ?

खरी खरी बातें–स्पष्ट बातें.........

प्रत्यक्ष रूप से मदिरा-पान, मांसाहार का समर्थन होने के कारण सट्टा इत्यादि कुकृत्यों से प्राप्त धन से ही ऐसे दूषण उत्पन्न होते हैं। सैनिकों के लिये वेश्यागृह, आज का अपौष्टिक भोजन, तथा नागरिक अधिकारों से वंचित एवं सत्वहीन प्रजा के लिए आधुनिक राज्य संस्था मुख्य रूप से उत्तरदायी है।

यद्यपि आज की सामाजिक सम्पत्ति की उत्पत्ति अनीति से ही हो रही है तथापि उसकी प्रतिष्ठा है। इसी कारण से बाल विवाह, विधवा माताओं की असहाय अवस्था, नारी जाति के प्रति सन्मान का अभाव, कारखानों और मिलों में होने वाली चारित्र हीनता, चाय, बीड़ी सिगरेट इत्यादि कुव्यसनों की बढ़ती में समाज महान रूप से उत्तर-दायी है। समाज की इन बुराइयों के सम्मुख चुनौती देने वाली धर्म संस्था भी उत्तरदायी है।

यद्यपि धर्म संस्था, राज्य संस्था एवं समाज का प्रधान अंग व्यक्ति ही है तथापि 'यौवन' नामक पुस्तक में प्राण और कामविकार नामक सोपान में इसको लक्ष्य करके प्रेरक वाक्य का समावेश किया गया है। यहां उस को उद्धृत करना उचित ही होगा।

प्राण और कामविकार..........

विकारमयी प्राण ही तुमको कुपथगामी बनाता है और तुम जीवन की वीर्य जैसी अमूल्य वस्तु क्षणभर में नष्ट करके हताश हो जाते हो। याद रखो। मानव की महत्ता मनुष्य देह मात्र में नहीं अपितु वीर्य संचय में ही है। जब तक तुम्हारे में वीर्य है, तब तक तुम अत्यधिक धनवान-चक्रवर्ती सदृश समर्थ शक्तिवाले हो। तुम्हारे में चैतन्य देदीप्यमान बना रहता है। परन्तु जब वीर्य नष्ट हो जाता है तब तुम्हारी गणना कायरों की पंक्ति में होने लग जाती है। जैसे २ तुम शक्तिशाली एवं सुन्दर बनते जाते हो वैसे २ तुम्हारे पर प्राण और अधिक आक्रमण करता जाता है अर्थात् तुम्हारे में प्राण की वृद्धि होती जाती है। युवावस्था और तरुणता इसकी परम सहचरी हैं। अतः तुम को इस प्रकार की परिस्थिति में विशेष रूप से जागृत रहना चाहिए। स्मरण रखो! एक बार भी यदि नियन्त्रण चला गया तो उसी क्षण प्राण तुम्हारी बुद्धि तथा हृदय को वासना युक्त बना डालेगा। जैसे २ तुम कामवासना के अधीन होते जाओगे वैसे २ तुम्हारी परतंत्रता बढ़ती ही जायेगी। वासना का एकमात्र विचार आते ही तुम्हारे पतन का श्री गणेश होता जाता है। तुम्हें ऐसा विदित होगा कि तुम्हारे उच्च विचारों तथा ज्योति का अपहरण हो रहा हो। अन्ततः तुम यहां तक पतित हो जाओगे कि वीर्य जैसी अमूल्य निधि के स्वामी होने पर भी कायर से कायर बालक के पगों का चुम्बन करोगे। ओहो. कैसा अधःपतन? कहां तुम्हारा सर्वोपरि शासन?

प

म

स

के गलत मनोरंजन, सामाजिक कुप्रथाओं का प्रचार, कृत्रिम सन्तति निरोध के साधनों का आविष्कार, गंदे साहित्यों का बीभत्स प्रचार, एवं व्यापार ये सब काम रूपी अग्नि में घृत का काम करते हैं।

इस का प्रत्यक्ष प्रमाण निम्नलिखित है :—

सिनेमा नहीं दिखाऊंगा

"भक्त गुणलाल गौतम ने तिथि १८-२-४५ प्रजा बन्धु नामक समाचार पत्र में 'मेरी सन्तान को सिनेमा से हानि' ऐसा लेख लिखा है। इस लेख में उन्होंने अपने ८, ११ वर्षीय दो बालकों में असमय में विकसित जातीय जागृति के विषय में अपना दुःख पूर्ण अनुभव दर्शाया है। उन का कहना है कि जो सन्तान निर्बल, मदोन्मत, अल्पायु में ही यौवन धारक एवं असमय में ही वृद्धावस्था को प्राप्त हुई दृग्गोचर होती है, वह सिनेमा का ही प्रभाव है।"

इस व्यक्तिगत अनुभव जन्य विचारों पर प्रत्येक विचारक को गम्भीरता पूर्वक चिन्तन करना अनिवार्य है और ब्रह्मचर्य विषयक मौलिक विचारणा की भी उतनी ही आवश्यकता है। पुनः पुनः इस कथन को कहने की आवश्यकता नहीं है, शक्ति-आत्म शक्ति का विनाश अधिकाधिक कामवासना से ही होता है। अतः इस पर विजय पाये बिना कोई भी विजय सत्य विजय नहीं होती।

मन का प्रधान विषय कामवासना ही है परन्तु मन पर सहज नियन्त्रण करने से पूर्व शारीरिक एवं वाचिक संयम रूप ब्रह्मचर्य से प्रारम्भ करना अनिवार्य है। इसी को दृष्टिगत करते हुए एक ब्रह्मचर्य भक्त कवि का कथन है········

मन गया तो जाने दे, पर मत जाये शरीर।
बिगर छोड़ी कामठी, क्यों लगे को तीर ॥

इस का यह अर्थ कदापि नहीं कि शरीर को वशीभूत कर मन
ो सर्वथा स्वछंद कर दिया जाये। इस प्रकार के आचारण को तो
ताकार ने मिथ्याचरण ही कहा है। ऐसे मिथ्याचारियों में तो
ग आदि विविध प्रकार के विकारों की भी उत्पत्ति हो जाती है।
ो मानव प्रायः उन्मत्त भी हो जाते हैं। ऐसा विदित होता है
इन्हीं घटनाओं के आधार मे जातीय वज्ञानिक 'फाईड' आदि ने
मवासना को प्राकृतिक प्रेरणा रूप से स्वीकृत किया है। इसी
ाह में प्रवाहित होने वाले अत्यधिक पाश्चात्य एवं पूर्वात्य डाक्टर
आकर्षित हो चुके हैं। उसी तत्त्वज्ञान के आधार पर ही श्रीमती
र्डमार्टिन' अथवा श्री मती 'मारगरेट सैंगर' द्वारा प्रदर्शित सन्तति
रोध पीठिका की रचना हुई हो ऐसा महात्मा गांधी जी के साथ हुए
ा के वार्तालाप से प्रतीत होता है। वस्तुतः कामवासना स्वाभाविक
ीं है अपितु प्राण की निकृष्ट अवस्था में से वह प्रस्फुटित होती है।
न्तु प्राण की उत्तमोत्तम अवस्था मे वह स्वतः ही उपशान्त
जाती है। कामवासना एवं क्षुधापूर्ति में महान् अन्तर है। क्षुधा
न्ति के बाद प्रसन्नता प्राप्त होती है अर्थात् स्फुरणा आ जाती है।
मवासना की पूर्ति के पश्चात् इस से विपरीत अनुभव होता है।
ः स्वेच्छा का नियन्त्रण अकृत्रिम बन जाता है। यह संयम उन्मार्ग
भी सन्मार्ग गामी बना देता है। महान् व्याधि से पीड़ित मानव
यदि इस मार्ग का सहज पालन करे तो वह नीरोगी बन सकता
। पूर्वोक्त कथन अनुसार यह अध्यात्म पथ पर गमन कराता है।

—:o:—

ब्रह्मव्रत का प्राथमिक स्वरूप

इस व्रत का प्राथमिक स्वरूप इस प्रकार है………

"मैं मनुष्य या तिर्यंच सम्बन्धी, स्त्री अथवा पुरुष के स
से कामासक्ति जन्य किसी प्रकार की मानसिक, वाचिक या
चेष्टा को नियंत्रण में रखूंगा। मानसिक एवं वाचिक स्व
यदि पूर्व संस्कार के कारण उत्पन्न हो जायेगी तो भी काया से
व्रत का खण्डन नहीं करूंगा।"

ब्रह्मचर्य मार्ग द्वारा सिद्धि प्राप्त करने वाले ब्रह्मचारी स
का मंगलाचरण इस प्रकार होता है। अन्ततः उस मार्ग पर उत्तर
प्रगति करता हुआ अखण्ड ब्रह्मचर्य सिद्धि उपलब्ध करके वह
और जीवन का अन्तिम आदर्श रूप बन जाता है।

—:०:—

दो मार्ग

ब्रह्मचर्य पथ पर गमन करने वालों में एक वर्ग ऐसा भी है
विवाह के पश्चात् भी सदैव ब्रह्मचारी बन कर समाज, राष्ट्र
विश्व का कल्याण करता है।

यद्यपि सामान्य रूप से आधुनिक विश्व में प्राण-कामवास
की तीव्रता के कारण विवाह माना संभोग के लिये हो न हो ऐस
माना जाता है। परन्तु विवाह संभोग के लिए ही नहीं। यदि ऐस
हो तो

"गृहस्थाश्रमसमो धर्मः न भूतो न भविष्यति"

इस सूत्र को शास्त्र में स्थान प्राप्त न होता। परन्तु ऐसा है अर्थात् इस वाक्य को शास्त्र में स्थान उपलब्ध है। कारण कि जब भारत की प्रजा को प्राणवाही जनसंख्या की आवश्यकता थी, उस समय अचूक एवं वीर सन्तति के लिये ही उपर्युक्त सूत्र की रचना की गई थी। यदि संयमी लोग केवल सन्यास मार्ग पर ही अग्रसर हों तो ऐसे लाभ का होना असम्भव हो जाता है। इसी हेतु गृहस्थाश्रम की ओर कुछ विशेष रूप से आग्रह किया गया था। उस समय वानप्रस्थी अथवा त्यागी से नियोग पद्धति की याचना के लिये भी समाज उत्सुक था। ये बातें इस के दृढ़ प्रमाण हैं। जब वह मर्यादा सीमा से बाहर हो गई तो श्रीमान् शंकराचार्य ने इस विषय में क्रान्ति की।

ऐसे दम्पती एक नहीं अनेक मिलते हैं जिन्होंने विवाह के अनन्तर भी अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करके अत्यधिक उत्थान किया है।

जैनागमों में विजया सेठ और विजया सेठानी का दृष्टान्त महान् चेतनाप्रद है। उन्होंने तो एक ही शय्या पर शयन करते हुए पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन किया है।

वैदिक सम्प्रदायों में रामकृष्ण परमहंस और शारदा देवी का ज्वलन्त उदाहरण प्राप्त है। विवाह के पश्चात् भी इस संन्यासी ने अपनी पत्नी की 'मां' रूप में पूजा करके जगत में डंका बजाया और उस "मां" ने वस्तुतः महाशक्ति के रूप में अपने को उत्तरदायी बना कर नारी समाज को उन्नतिशील बनाया था। आज भी ब्रह्मचर्य

सुदर्शन पर नगर की राजमाता अभयारानी अत्यन्त मु
हो चुकी थी। इस ने छल कपट द्वारा उस को एकान्त में बुलाय
अनेक प्रकार से उस के शरीर का स्पर्श किया। परन्तु अनेक प्रलो
देने पर भी महान् एकपत्नीव्रत धारी सुदर्शन किंचित्-मात्र
चलायमान नहीं हुआ। इस से क्रोधित अभया ने इस को कलंकि
करके हाहाकार मचाया। क्रोधातुर राजा ने दीर्घ दृष्टि से विच
किये बिना ही इस को शूली-दण्ड की आज्ञा दे दी। निन्दाप्रिय लोग
ने सुदर्शन के अपयश के गाने गाये। किन्तु अहिंसा, सत्य एवं ब्रह्मच
में अडिग सुदर्शन अडोल ही बना रहा। अन्ततः विजय सत्य की ह
हुई। उस समय भी सुदर्शन अभयारानी को अभयदान दिला क
स्वयं विनम्र ही बना रहा। सत्यमेव इस प्रकार के मानव विश्व मे
महान् रत्न के समान होते हैं।

विवाह के पश्चात् एक सन्तान होने के बाद ब्रह्मचारियों में समस्त विश्व के लिये आदर्श रूप भगवान् महावीर की जीवनी पुनः विचारणीय है। उन्होंने पुत्र सन्तान से नहीं, अपितु पुत्री सन्तान से ही तृप्त रह कर आदर्श गृहस्थाश्रम के एक पत्नीव्रत का तथा स्त्री पुरुष की स्वाभाविक समानता का यथार्थ बोध कराया। इससे स्पष्ट है कि 'एक गृहस्थ के लिये ब्रह्मचर्य स्वाभाविक नहीं है' ऐसा कहने वालों की जिह्वा अवश्य रुक जायेगी।

वस्तुतः विवाहित जीवन का प्रारम्भ कामवासना की पूर्ति के लिये नहीं किन्तु कामविकार को नियन्त्रण में रखा जाये इसी लिये हुआ है। इसी हेतु अमरीकन डाक्टर 'थारो' सिंह की भांति आदर्श गृहस्थ के लिये एक ही बार की सम्भोग क्रिया के पश्चात् सन्तोष के लिये सूचित करते हैं। तथापि शिष्यमंडली जब प्रश्न करती है कि इतने मात्र से यदि तृप्ति न हो तो वे कहते हैं 'वर्ष में एक बार'। इस से भी तृप्ति न हो—'छः मास में एक बार' इस पर भी सन्तुष्टि न हो तो मृत्यु को आमन्त्रण ही देना है। इस से यूरोप के भी निष्णात ब्रह्मचर्य को ही स्वाभाविक मान कर कितना महत्त्व देते हैं, यह सब सम्यग्-रूप से समझ में आ सकता है।

इसी लिये ही सन्तानोत्पत्ति की अनिवार्यता के बिना संभोग स्वदारा व्यभिचार ही है। क्या कामविकार की तृप्ति कभी किसी को भी हुई है………

भोगों को भोग कर कोई, भोग इच्छा शान्त नहीं होय।
घी होम में अग्नि वत्, पल पल बढ़ती ही जाय॥

यह शास्त्र वाक्य है, और अनुभवी का उद्गार भी है……
'मातृ जाति के मांसपिण्ड का मर्दन किया तो भी न प्राप्त हुआ

एक रस विन्दु।"

इसी लिये ब्रह्मचर्य स्वाभाविक ही है। ब्रह्मचारी ही शोणित की नहीं किन्तु सुविचार सन्तति की सृष्टि मे चरित्र की सुगन्ध चहुं ओर फैला देते हैं। वीर्य सन्तति से विचार सन्तति ही सर्वोपरि है।

प्राचीन समय में वानप्रस्थाश्रम की महत्ता इसी लिये थी कि इस में पति-पत्नी दोनों को साथ में रह कर ब्रह्मचर्य का पालन करना होता था। आधुनिक वानप्रस्थाश्रमी वन में निवास करने वाला नहीं अपितु समाज में ही करने वाला होगा। आज इस वर्ग की अति अधिक आवश्यकता है। महात्मागांधी इस प्रकार के वानप्रस्थाश्रम के ज्वलंत उदाहरण थे। वे अपने अनुभव से कहा करते थे कि स्त्री सहित ब्रह्मचर्य पालन गृहस्थ युगल का आनन्द तो कुछ विलक्षण ही होता है। उनके इस आनन्द में कस्तूरबा का अमूल्य सहयोग था। गान्धी जी तो विश्व विख्यात थे ही किन्तु प्रसिद्धि मात्र से दूर रह कर ब्रह्मचर्य के पथ पर गमन करने वाली जगदम्बा तो वस्तुतः जगत जननी ही मानी गई। पति के प्रति अनन्य भक्ति की दृष्टि के कारण ही कस्तूरबा गान्धी जी की अपेक्षा अधिक पूज्य हो गई।

[illegible] आवश्यक है।

[illegible]

पाप से उन्मुक्त होने के लिए जीवन के तट पर निवास करने वाला अपनी मरणावस्था का सुधार करें ।

विधवा वहनों को ब्रह्मचर्य व्रत पालन की सन्मति देने वाले विधवा वहनों के माता-पिता को तथा विधुर पुरुषों को भी इसी प्रकार की सन्मति दें । यदि उनके दूषित विचारों में पवित्रता न आवे तो प्रवल आन्दोलन द्वारा जागृति लाने की अति अधिक आवश्यकता है ।

इस प्रकार ग्राम एवं समाज सेवकों की जो शून्यता दृष्टि-गोचर हो रही है उस की पूत निश्चय रूप से होगी । सामाजिक क्षेत्र में व्यक्ति दुराचार रूप महाव्याधि का प्रसार अवश्य ही न्यून हो जाएगा । क्षयरोग, हृदयवन्ध-हृदय-धड़कन का वन्द होना एवं दमा जैसे अन्य भयंकर रोग भी कम हो जाएंगे । आयु काल भी पूर्ण होगा । वाल मृत्यु रुक जाएगी । वेश्याओं की वृद्धि नहीं होगी एवं संस्कृति का साम्राज्य प्रफुल्लित होगा ।

इसी भांति अन्य दृष्टि से विचार करने पर एक द्वितीय वर्ग ऐसा भी है जो आजन्म अविवाहित रह कर कर्मयोग, ज्ञानयोग तथा भक्तियोग में ही किसी एक को मुख्य रूपसे अपना कर जीवन निर्वाह करता है ।

जैन साधु साध्वी वर्ग में अविवाहित अवस्था में ही दीक्षित होकर सन्यास पथ को शोभित करने वाले अनेक दिव्य-रत्न प्राचीन समय में हो चुके हैं । आज भी विद्यमान हैं. किन्तु वाल दीक्षा के व्यामोह ने उस में वहुत ही विकट स्थिति उत्पन्न कर दी है । उसका उल्लेख करना भी अनिवार्य है ।

प्रयोग करते थे।

वैदिक ऋषि जमीकन्द का उपयोग करते थे किन्तु उस समय गमता से उपलब्ध हो जाने के कारण उनका केवल उससे ही निर्वाह जाता था। परन्तु इसका अन्धानुकरण करते हुए उपवास भी जमीकन्द का भोजन करना अभीष्ट नहीं है। इसी प्रकार र्तमान परिस्थिति में केवल फलाहार अथवा दुग्धाहार सर्वत्र सभी ो सुलभ नहीं।

ब्रह्मचारी को मांसाहार नहीं करना चाहिए। यद्यपि स्वामी विवेकानन्द जी किसी परिस्थिति में मांस ग्रहण करते थे, तथापि न्होंने इसमें अपनी न्यूनता को भी दर्शाया है। कोई भी धर्म मांसाहार विधान को करता ही नहीं है। फिर भी इस्लाम धर्म तथा ईसाई र्म के नाम पर जो लोग इस विधान को मानते हैं, यदि वे इस र्म के सर्व संयोगों पर दीर्घ दृष्टि से विचार करें तो उपर्युक्त कथन नको स्वयमेव ही समझ में आ जाएगा। यह बात तो सुप्रसिद्ध ही कि मदिरा मनुष्य की विवेक बुद्धि को नष्ट करती है।

अनीति के धन से उत्पन्न भोजन भी मन को दूषित करता है। क सेठ को अन्यायी जुआर के घेवर* खाके में अपनी ही पुत्री पर विकार उत्पन्न हुआ। ज्यों ही पुत्री का हाथ पकड़ने जाता है त्यों ही ही सुशील पुत्री सावधान होकर माता के समीप चली जाती है। तीक्ष्ण बुद्धि माता उस की बात सुनकर सब बात समझ गई। उसने ति को दस्त की गोली दी। अन्ततः जंगल आने के अनन्तर सेठ

*घेवर :—एक प्रकार का भोजन होता है।

की विवेक पूर्ण बुद्धि पुनः अपने स्थान पर आ गई और सेठ
पश्चात्ताप करने लगा।

जुआ, सट्टा, अत्यधिक लाभ, महायन्त्र, निष्ठा तथा चोरी
महा-व्यसन तो ब्रह्मचारी के लिए नितान्त त्याज्य है। इतना ही
अपितु चाय, बीड़ी जैसे समाजमान्य व्यसन भी ब्रह्मचारी की ब्र
साधना में अनिष्ट परिणाम वाले हैं।

एक जिज्ञासु व्यक्ति ने अपने व्यक्तिगत अनुभव से कहा
बीड़ी सिगरेट ने मेरी विषय रूपी अग्नि को बढ़ाने में घी का
किया है।

चाय से वीर्य में पतलापन एवं क्षीणता आती है। चाय
तथा अन्य आर्थिक, गौविषयक आदि की हानि के साथ साथ ब्रह्म
साधना में विघ्न उत्पन्न होते हैं।

अतः गाय का दूध, मिर्च एवं तेल का कम प्रयोग, मिष्ठान्न
कुश, सहज प्राप्त सस्ते फल, गेहूं, बाजरा, प्रभृति धान्य, चन
ग, आदि जैसे कठोर अन्न का यथासंभव कम उपयोग, तली हु
स्तु की उपेक्षा, चीनी तथा नमक की वस्तुओं पर नियन्त्रण कर
वश्यक है।

जो अधिक श्रमजीवी नहीं है उनके लिये प्याज का
हानिकारक हो सकता है। आलू, शकरकन्दी, गाजर
ठ वनस्पति का इच्छापूर्वक उपभोग करना अस्वाद व्र
क एवं ब्रह्मचर्य साधना का बाधक बन सकता है।

(ख) रात्रि भोजन-त्याग, शारीरिक श्रम का आग्रह :
उदर-शुद्धि ब्रह्मचर्य साधक के लिये अत्यन्त आवश्यक

ाचर्य साधक को शौच आदि क्रिया नियत समय पर होनी चाहिये। र्थात् कब्ज नहीं रहनी चाहिए। इस दृष्टि से रात्रिभोजन का ाग और आग्रह आवश्यक है।

रात्रि भोजन के त्याग से उदर भारी नहीं रहता है। और ड़ा शारीरिक श्रम करने से रक्त संचार में सुविधा रहती है। जन की पाचन क्रिया से एवं अनुकूल रक्त-अभिसरण से शक्ति में ूर्ति रहती है। मानसिक उत्तेजना के कारण अशक्त मानव जिस कार कदम कदम पर विकाराधीन बने रहते हैं उस प्रकार ये विकारों वशीभूत नहीं होते, किन्तु विकार संग्राम में स्थिर बने रहते हैं।

रात्रि भोजन त्याग के विषय में जैन धर्म ने तो विस्तार रूप से वेचन किया है। वह सहेतुक भी है। आधुनिक नौकरी-कानून का ल रात्रि में अति व्यवसाय का होना है। पक्षियों का अरात्रि भोजन ो आरोग्यता का अपूर्व दृष्टान्त है। रात्रि भोजन का त्याग मर्यादित व्यवसाय तथा निरर्थक रात्रि जागरण पर स्वाभाविक रूप नियंत्रण करता है। और उससे मानसिक शांति भी उपलब्ध होती जिस से वह ब्रह्मचर्य साधना में सहायक भी बनता है।

(ग) पोशाक-शयन-स्पर्श-गन्ध........

वेशभूषा के विषय में भी ब्रह्मचर्य प्रेमियों को सावधान रहना ाहिये। कृत्रिम केशों को संवारना, मुलायम स्पर्श वाले वस्त्रों था विलासी लिपा-पोती ब्रह्मचर्य साधना में महान् विघ्न को उत्पन्न रती हैं।

सुकोमल शय्या का त्याग भी आवश्यक है। ब्रह्मचर्य प्रेमी ाता पिता के लिये यह आवश्यक है कि वे चार वर्ष के पश्चात् लड़के लड़की को एक शय्या पर शयन न करावें। सम्भव हो तो पृथक

प्रकोष्ठ का प्रबन्ध करना भी लाभप्रद है। पुरुष को पुरुष के साथ तथा स्त्री को स्त्री के साथ विकारमय स्पर्श करना सर्वथा वर्जित है। बच्चों का चुम्बन करना, अंग स्पर्श करना, इत्यादि कुछ नहीं कहा जा सकता कि ये सब किस समय विकार-उत्पादक बन जायेंगे। यह विज्ञान सिद्ध है कि स्त्री पुरुष के परस्पर के वस्त्र तथा शय्या के उपभोग से भी विकारमय आंदोलनों का स्पर्श उत्पन्न होता है। एक आसन पर अथवा जिस आसन पर स्त्री बैठी हो उस पर पुरुष को अथवा पुरुष-आस पर स्त्री को दो घड़ी* पर्यन्त बैठना उचित नहीं है।

इत्र फुलेल, लिपस्टिक तथा पाऊडर आदि कृत्रिम स॰ वर्धक वस्तुओं से सर्वथा दूर रहना चाहिये। खादी के अल्प व सजावट रहित चेहरा तथा कठोर शय्या की आवश्यकता है। वस्त्र स्त्री पुरुष दोनों के लिये हितकारी हैं। स्त्रियों के लिये अ को संकुचित न करने वाली पंजाब की स्त्रियों की जितनी वेशभू उतनीआदर्श रूप है। अंगों का अति संकुचन करने वाला तथ निकृष्ट परिधान उचित नहीं समझा जाता है।

(घ) दृश्य—वचन........

नाटक सिनेमा पर नियन्त्रण करना अनिवार्य को अन्य के मोह के कारण रूप कृत्रिमता से दूर रह वैसे ही दूसरे के प्रति मोहित न होने के लिये जागृत है। कामासक्त पशु पक्षी को न देखना, वैसे स्था करना, नीचे मुख करके चलना, विकारमय दृष्टि से यदि दर्शन हो भी जाये तो स्त्री को पुरुष के प्रति

घड़ी*—२४ मिनट की एक घड़ी होती है।

करते हुए स्त्री पुरुष तथा पुरुष पुरुष अति कामासक्त बने, ऐसे दृष्टान्त अनुभवसिद्ध है।

(छ) व्यायाम-प्राणायाम ....

शीर्षासन, बद्धपद्मासन आदि कितने आसन ब्रह्मचारी को साक्षात् सहायता करते हैं। और पश्चिमोत्तान, कुक्कुटासन, मयूरासन आदि परम्परा से व्रत को सहायता करते हैं। विशेषतः रीढ़ की हड्डी सीधी रखना अति आवश्यक है।

प्राणायाम आसन भी इस में बहुत उपयोगी हैं परन्तु इस के लिये विशेष अनुभवों की आवश्यकता है। कुंडलिनी की अधोमुखता के कारण ही कामविकार पीड़ित करता है। यदि वह खुल जाये तो भवसागर रूप नदी पार हो जाये। हठयोग प्रसिद्ध नवली, नेतिधोति आदि क्रियाएं भी इस मार्ग में उदर शुद्धि के कार्य में सहायक रूप होती हैं।

(ज) पर्यटन-सृष्टि दर्शन.........

प्रातः सायं खुली वायु में भ्रमण करना और अकृत्रिम दृश्य देखने का अभ्यास भी प्रस्तुत साधना के साधक का उत्तम सहायक होता है।

ज्योत्स्नामय मनोरंजक आकाश दर्शन से तथा वैसे ही प्राकृतिक दृश्य देखने की रसवृत्ति से विकार शान्त हो जाते हैं।

रात्रि में विकारी विकल्प आयें तो तत्क्षण नाभि पर गीला वस्त्र रखने से तथा सामान्य रूप से गुदा स्थित वायु को ऊपर की ओर खींचने से भी कामवासना नष्ट हो जाती है।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

मिला शुभ्र शान्त सुधा की धारा,
विकार का दर्द मिटा डाला।

जा मोह, भाई मुझ मार्ग में से,
और प्रेम के झरने बहने दे।

यदि वह प्रेम प्रवाह मलिन हो रुक जाये,
तो मेरा विश्व व्यापक आत्मा क्षत विक्षत हो जाये।

(ठ) अनन्य निष्ठा........

यद्यपि ये सब है तथापि ब्रह्मचर्य साधना केलिये साधक अपने ही ऊपर अनन्य निष्ठा नहीं है, अथवा जिस को "ब्रह्म[illegible] का पालन आवश्यमेव हो सकता है और किसी भी संकटकाल[illegible] अवस्था में मैं स्थिर रह सकूगा" इस प्रकार की श्रद्धा न हो तो [illegible] साधक नींव शिला रहित भवन की भांति समय आने पर गिर [illegible] जाता है। इस बात पर पाठक समूह पुनः पुनः अवश्य विचार करें[illegible]

—— : o ——

'ब्रह्मपथ की कठिनाइयां'

आपने व्यक्तिगत रूप से बहुत विचार किया, परन्तु व्यक्ति भले ही कितना महान् क्यों न हो आखिर तो वह एक सामाजिक प्राणी ही है। अतः जिस समाज में ब्रह्मचर्य-साधक-साधिकाओं का वास है, यदि वह समाज ब्रह्मचर्य साधना की इच्छा नहीं रखता है तो पग पग पर बाधाएं उसके मार्ग को अवरुद्ध करेंगी। आधुनिक समाज की तथा राजकीय संस्था की शिथिलता का उल्लेख "कामजन्य अपराध" प्रकरण में किया जा चुका है। अतएव समाज तथा राज्य को इस ओर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए। आज भी प्रायः ऐसी कायरता बहुत से स्थानों पर दृष्टिगोचर होती है कि आवारा लड़के यदि किसी बहन का अपमान अथवा आलोचना करें तो भी लोग चू या चां कुछ भी नहीं कर सकते हैं। अर्थात् आवारा लड़के को कुछ नहीं कह सकते हैं। स्पष्ट है कि इस प्रकार के कायर समूह में से अहिंसक स्त्री अथवा उसके ही सम्बन्धी वीरांगनाओं या वीरों के निकलने की किंचित्-मात्र भी सम्भावना नहीं की जा सकती है। जब ऐसे कायर सामूहिक रूप से एकत्रित हो जाते हैं तब अवश्य ही सामना करते है। इस प्रकार का सामना कायरों का संगठित स्वरूप ही है। स्त्री हो अथवा पुरुष परन्तु वीर वही है जो मानवता के हेतु समस्त समूह के साथ झूझता-टक्कर लेता है।

वीरता..........

शिवा जी इसी प्रकार के ही एक वीर पुरुष थे। उन्होंने कल्याण शहर से (महाराष्ट्र के अन्तर्गत) सैनिकों द्वारा लाई गई मुस्लिम स्त्री को भी माता तुल्य समझ कर सम्मानित किया था। यह घटना इस बात की पुष्टि करती है कि उन का यह

के सम्मुख स्थिर रह सकती है यह सर्वत्र प्रसिद्ध है। यह तो हमें स्वीकार करना ही चाहिये कि कायरता की अपेक्षा प्रतिकार करने वाली नारी का स्थान, सामना करने की दृष्टि से ऊंचा है ही। परन्तु अहिंसक मार्ग में संघर्ष करने वाले का स्थान प्रत्येक दृष्टि से सर्वोत्तम तथा आदर्श रूप है। प्रश्न यह उठता है कि अहिंसक मार्ग में प्रतिकार कैसे किया जाये।

अहिंसक मार्ग ....

अहिंसक प्रतिकार-कर्ता ने यदि जीवन में नीति, सत्य, शीलव्रत, अपरिग्रह, नम्रता आदि कुछ भी व्यवस्थित रूप से प्राप्त न किया हो तो उस का अहिंसक प्रतिकार दीर्घकाल पर्यन्त स्थायी नहीं रह सकता और अल्प समय में ही प्राप्त विजय का प्रत्याघात उत्पन्न हुए बिना नहीं रह सकता।

परन्तु जिसने पूर्व कथित सम्पत्ति प्राप्त कर ली है उसको यह प्रतिकार सहज में ही उपलब्ध हो जायेगा। राजीमती के प्रसंग को हम देख चुके हैं। प्रारम्भ में तो वह किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो गई थी और मर्कटबद्ध आसन से बैठ गई थी। किन्तु तत्क्षण ब्रह्मचर्य निष्ठा के कारण उसमें स्वाभाविक शक्ति की उत्पत्ति हो गई और वह प्रेरक गुरुणी बन गई।

सुभा नाम की बौद्ध साध्वी की घटना प्रस्तुत प्रसंग में विशेषतया उल्लेखनीय है। वह एक वन में चली जा रही थी। यद्यपि साध्वी जीवन था तथापि शरीर-सौष्ठव-सौन्दर्य को देख कर एक कामी पुरुष उत्तेजित हो कर उसके पीछे पीछे चल पड़ा। जब साध्वी खड़ी हो गई तब वह भी उस को निर्निमेष दृष्टि से देखने लगा।

इस सम्बन्ध में जैनागमों में लिखित सती चन्दन वाला का दृष्टान्त जानने योग्य है।

चन्दनवाला जिस सेठ के पास रहती थी वह तो इस को पुत्री के समान ही समझता था। इस समय चन्दन वाला के लिये तो यथार्थ माता पिता मूला सेठानी तथा सेठ ही थे। परन्तु एक वार चन्दना पिता के धूली से भरे हुए पावों को देख कर पानी का पात्र लेकर भागती हुई पिता के सम्मुख आती है। सेठानी इस समय सामने ऊपर सीढ़ी वाले कमरे में बैठी थी। चन्दना झुक कर पालक पिता के चरण कमलों को स्वयं धोने लगी। नीचे झुकते ही चन्दना की काले भ्रमर जैसी वेणी खुल जाती है। सेवा व्यस्त उस सेविका को अपने केशों की चिंता न थी। अतः सेठ ने कीचड़ से मलिन न हो जायें ऐसा विचार कर केश हाथ से ऊंचे कर दिये।

बस इसी समय सेठानी की दृष्टि ऊपरी कमरे की खिड़की से पड़ती है। यदि वह बात स्पष्ट कर लेती तो शंका का समाधान हो जाता। परन्तु इस प्रकार की घटनाओं में ऐसी वृत्तियों का स्थान विशेषतया प्रमुख ही होता है।

मूला गृहिणी ने तो यहां तक भी मान लिया "इस वर्ष तक यदि यह रह गई तो अवश्यमेव मेरी सपत्नी हो जायेगी और मेरा सर्वस्व नष्ट हो जायेगा।" ओह! "कैसा अधम विकल्प है।" बस उसके हृदय में ईर्ष्या की ज्वाला भभक उठी और अवसर पा कर चन्दना के बाल काट डाले। भोजन इत्यादि न देकर उस चन्दना को एक कोठरी में बन्द कर दिया।

उचित ही कहा है कि 'सत्यमेव जयते' अर्थात् सत्य की ही जय होती है। विजय ने चन्दना के चरणों का ही स्पर्श किया। उसे

सन्तति निरोध

ब्रह्मचर्य की दृष्टि से सन्तति-निरोध प्रकरण का वर्णन भी आवश्यक है। जब सन्तति के लिये सम्भोग क्रिया होती है तब सन्तति की सीमा स्वाभाविक हो जाती है। इस प्रकार की मर्यादा से विवाह संस्था, बाल जीवन तथा सामाजिक सद्गुण प्रभृति बातें उचित रूप से चिरस्थायी रह सकती हैं। ऐसा दिखाई देता है कि वर्तमान की संभोग क्रिया-मैथुन क्रिया सन्तान उत्पत्ति के लिये नहीं अपितु विकार पूर्ति के लिये ही की जाती है। ऐसी विकार दोषक क्रिया द्वारा जो सन्तान उत्पन्न होती है वह धर्म सन्तान कभी नहीं मानी जा सकती। तथा काममयी सन्तान समाज, राष्ट्र अथवा विश्व का कल्याण करने वाली नहीं होती। माता पिता अथवा परिवार की सेवा शुश्रूषा नहीं कर सकती। इतना ही नहीं बल्कि यह भी देखा गया है कि जीविकोपार्जन भी कोई ही कर सकता है। स्पष्ट है कि आज चारों ओर भूखमारी फैलने का यह भी एक प्रमुख कारण है।

इस बेकारी को दूर करने के लिये प्रजा में केवल ब्रह्मचर्य की निश्चल श्रद्धा को जागृत करना ही एक मात्र अद्वितीय उपाय है। जब विकृत विकारों को अवरुद्ध न कर के कृत्रिम साधनों द्वारा सन्तति नियंत्रण मार्ग अपनाया जाता है, और वर्तमान में तो राष्ट्र प्रेमी सुप्रसिद्ध समाचार पत्रों में भी इस का विज्ञापन विशेष रूप से किया जाता है, तब कितना अधःपतन होता है इस से कौन अनभिज्ञ है।

विद्या मन्दिर जैसे पवित्र स्थानों में अध्ययन करने वाले महाविद्यालय के युवक एवं युवतियां इस प्रकार विपरीत मार्ग की ओर आकृष्ट हो कर अपनी अद्‌भुत विकसित शक्ति के क्षय तथा संस्कृति के विनाश को आमन्त्रित कर रहे हैं। कितना भयंकर सर्वनाश है यह ! कभी अन्न अभाव से तो शरीर का अधिकाधिक विनाश होगा किन्तु क्षुधा मरण के निवारण हेतु आत्म पतन की स्वीकृति यह तो महान् क्षति है। इस मार्ग में प्रविष्ट मानव समूह विकार रूपी धधकती अग्नि में भोग रूपी घी से होम करने के उपाय को दिखा कर परिणाम स्वरूप उन को कायर, प्रमादी, विलासी बना कर क्षुधामरण के निवारण के स्थान पर प्रायः वृद्धि ही करें तो आश्चर्य नहीं होगा ?

कल्पना कीजिए यदि कोई भी विवाह सम्बन्ध से सम्बन्धित न हो और निर्बन्ध सहवास काम भोग के लिये स्त्री पुरुष तत्पर रहने लग जायें तो मानव मानव रह सकेगा ? गली गली में परिभ्रमण करने वाले कुत्ते से भी उस की अवस्था निकृष्ट हो जायेगी। जिस प्रकार पारिवारिक जीवन मानव को उत्तरदायी बना देता है उसी प्रकार सन्तति–स्नेह, संयम में स्वाभाविक ही सहायक बन जाता है। मासिक धर्म के दिनों में पति पत्नी के विकारी स्पर्श का अन्तर नैसर्गिक रूप से ही संयम में जैसे लाभकारी बनता है वैसे ही गर्भ धारण तथा शिशु स्तनपान के मध्य में आचरित ब्रह्मव्रत कल्याणप्रद होता है। संयुक्त कुटुम्ब से स्वच्छन्द गमन युक्त विहार पर जो अंकुश रहता है, इस प्रकार की विचारणा से क्षुधामरण जन्य दुःख तो अति गौण बन जाता है।

तथापि इतना तो निश्चित ही है कि आज सन्तति नियमन की अत्यधिक आवश्यकता है। कामविकार के अतिपोषण के कारण

आज स्वाभाविक रूप से ही क्षुधामरण के प्रलय कांड का निर्माण होता जा रहा है। अतः इस प्राकृतिक संकेत को समझ कर ब्रह्मचर्य की दृष्टि से विवाहित स्त्री पुरुषों के लिये सन्तति नियमन की नितान्त आवश्यकता है। आजीवन कौमार्य व्रत पालक कुमार एवं कुमारियां विवाहितों के लिये ब्रह्मचर्य की दृष्टि में सन्तति निरोध में प्रेरक बनेंगी। समाज, राष्ट्र तथा धर्म के दीर्घ द्रष्टा एवं चरित्र-शील नेताओं .... जिधर देखें, उधर ब्रह्मचारी की ही सृष्टि का निवास है अतः ब्रह्मचर्य स्वाभाविक ही है। विकार पुष्टि में एक भी तत्त्व आनन्द-प्रद नहीं है। जो आनन्द मिल रहा है वह केवल हृदय में रमण करने वाले संयम का ही है। जैसे भ्रम में कुत्ता हड्डी को ही रसप्रद मानता है, शिशु अंगूठे को ही स्तन जान कर रसप्रद समझता है ठीक वही गति विकार पोषण की है।"

अब इस बात को शुद्ध विज्ञान से समझायें। बात यह है कि संभोग क्रिया काल में जो सुख प्रतीत होता है वह वस्तुतः विकार की तात्कालिक तृप्ति का नहीं अपितु उस क्रिया से पूर्व जो वीर्य सचित किया था उस का तथा पूर्व संचित तन्मयता का ही होता है। मैथुन क्रिया के अनन्तर जो उत्साह अभाव एवं दुःख की प्राप्ति होती है वही संभोग क्रिया का दुष्परिणाम है।

इस प्रकार जब सभी जगह इस प्रकार के साहित्य का तथा दृष्टि का प्रचार होगा तब ब्रह्मचर्य के माध्यम से सन्तति निरोध अधिक सुलभ बन जायेगा, प्रजा तो अधिकांश रूप से ऐसी है कि जिस वस्तु की समाज में प्रतिष्ठा हो जाती है, उसी ओर आकृष्ट होती है। वर्तमान समय में समाज में धन की प्रतिष्ठा उत्तरोत्तर बढ़ रही है अतः समाज भी इसी ओर अग्रसर हो रहा है। डंके की चोट से कहा जा सकता है

गृहस्थाश्रम का अन्तिम आदर्श ब्रह्मचर्य है ।
उस साधना हेतु मर्यादा दम्पती की है ।

गृहस्थाश्रम का अन्तिम आदर्श ब्रह्मचर्य ही है । किन्तु शायद जीवन पर्यन्त कभी ब्रह्मचर्य का पालन न हो सके । वासनाओं के आक्रमण में कदाचित् सदा संयम न हो सके । इस दृष्टि से एक पत्नीव्रत और एक पतिव्रत से युक्त गृहस्थाश्रम का निर्माण हुआ । वानप्रस्थ आश्रमी अथवा ब्रह्मचर्य प्रेमी सद् गुरु की उपस्थिति में समाज ने उस पर मोहर छाप लगाई थी । भारत में यह सब स्वाभाविक था । भारत ने विज्ञान का बहुत आविष्कार किया, परन्तु इस आविष्कारक विज्ञान को धर्म तथा तत्वज्ञान के अधिकार में ही रखा था । आज जब विश्व एक होने जा रहा है तो विज्ञान उस के सर्वथा विपरीत मार्ग की ओर जा रहा है । भारतीय संस्कृति को पुनः एक बार विश्व विजयी बनने के लिये तो विश्व के प्रजा समूह को एक केन्द्र-स्थान में एकत्रित करना ही पड़ेगा । इस हेतु भी यदि ब्रह्मचर्य को साधना भारत मानव समाज में विकसित न होगी तो विश्व शान्ति का आना नितान्त असम्भव हो जायेगा । यह कार्य राज्य का नहीं अपितु मानव समाज का है । कारण कि मानव समाज में एक महान् शक्ति है जो प्रेम-धर्म से ब्रह्मचर्य को विश्व प्रतिष्ठा दिला सकेगी ।
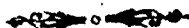
पृथ्वी में रम गई थी। इस लिए ही 'रामसीता' के स्थान पर 'सीता राम' का उच्चारण होता है। एक महान समाज शास्त्री ने तो यहां तक कहा है—'अजा मुखतः मेध्या' अर्थात् बकरी मुख से पूजी जाती है क्योंकि वह कंकर के बिना अर्थात् वनस्पति मात्र को पचा सकती है। 'गावो मेध्यास्तु पृष्ठतः' गाय पूंछ से पूजी जाती है। कारण कि यद्यपि गौ भूसा, खल, बिनौले इत्यादि का मिश्रित खाना रूप भोजन करती है तथापि गोबर को विष्टा की भांति दुर्गंध युक्त नहीं बना देती। 'ब्राह्मणाः पादतो मेध्या'। ब्राह्मण पांवों से पूजे जाते हैं क्योंकि उस परिव्राजक के चरण सदैव परोपकारार्थ ही गमनशील रहते हैं। परन्तु 'मेध्याः सर्वांगतः स्त्रियः' अर्थात् स्त्रियों के समस्त अंग ही पूजनीय हैं। प्रत्येक अंग में 'पूजा के योग्य नारी जाति' की अद्भुत महिमा है।

आज की नारी कोमलांगी तथा शृंगार की पुतली बन गई है अथवा नारी को कायर तथा कामवासना की साक्षात् मूर्ति हो बना दिया गया है। सिनेमा में ही नहीं चित्र में देखिए। समाचार-पत्रों में देखिये! स्त्री को किस प्रकार निकृष्ट अवस्था में दिखाया जा रहा है। आज नारी जाति स्वयं भी वैसी बन चुकी है। जरा उसकी वेशभूषा पर ही दृष्टि डालिए, लिपापोती—शृंगार रस की ओर देखिये, केशविन्यास पर ही किंचित्—मात्र दृष्टि फेंकिये। चेहरा, गाल, ओष्ठ तथा प्रत्येक अंगोपांग किस प्रकार बनावटी वस्तुओं से सुशोभित करके दिखलाती है मानो खिलौना अथवा बनावटी दृष्टि का भाजन न हो। इस करुणावस्था में से नारी को निकलना ही पड़ेगा। नारी जाति को स्वयं इस प्रस्तुत अवस्था से छुटकारा पाने के लिए हृदय में तीव्र उत्कण्ठा को धारण करना ही होगा।

आज समस्त जगत् महिला समाज की ओर से इस प्रकार [illegible] आशा रखे हुए है कि वह वनिता रूप को जननी रूप में परिवर्तित करे। लक्ष्मी, सरस्वती आदि स्वरूपों के स्थान पर जगत् जननी बने। विश्व भर में स्नेह रूपी जल को प्रवाहित करने वाली [illegible] रूपी गंगा मैया बने।

एक समय 'जर जमीन जोरु ये तीनों है कजिया [illegible] ऐसा माना जाता था। परन्तु आज तो जोरु-स्त्री इतनी [illegible] बन गई है कि वह जर-धन जमीन पर की जनासक्ति [illegible] विश्व भर में शान्ति के पथ को सुलभ बना देगी।

नारी के हाथ में जादू है। उसके नयन [illegible] है। उसके हृदय में विश्व-प्रेमामृत है, सब कुछ है। [illegible] केवल उस को अवसर देने और दिलाने की। [illegible] एव ब्रह्मचर्य की उपासना के बिना प्राप्त कर [illegible] केगा।

जहां विवाह जैसी पवित्र वस्तु को विकृत [illegible] अस्पृश्य बना दिया गया है वहां आजीवन कौमार्य [illegible] ना यह सब दावानल रूप [illegible]

जैन साध्वी गण अधिकांश रूप में कुमारियों [illegible] दीक्षा देने को तत्पर रहता है। परन्तु आधुनिक [illegible] नारियों के कौमार्यव्रत को नान्दोलन [illegible] [illegible]

वर्तमान में साध्वियों की धार्मिक आवश्यकता है किन्तु ऐसी साध्वियों की जो नर नारियों के चतुष्पथ-चौराहे में आकर उनकी कुबुद्धि को सन्मार्ग पर लाएं। समाज में और गृहसंसार में जहां चारों ओर दुष्टता, कुटिलता, व्यभिचार, और छल-कपट व्याप्त हो वहां पवित्रता, सरलता, सदाचार तथा सर्व-व्यापकता ला दें।

इस प्रकार की ब्रह्मचारी गृहस्थ आश्रम में हों या सन्यास में परन्तु ब्रह्मचर्य की प्रतिष्ठा समस्त विश्व में व्याप्त कर दें यही प्रभु से प्रार्थना है।

——: ० :——

प्रभु दया

यहां तक के प्रकरणों में जिस ब्रह्मचर्य की साधना के विषय में विविध रूप से जो कुछ कहा गया है यदि उसमें प्रभु कृपा न हो तो यह सब एक के अंक बिना की बिन्दिया* के समान है।

यदि ईश्वर की कृपा होगी तो पतन की पराकाष्ठा तक पहुंचा हुआ स्त्री हो अथवा पुरुष वह भी बच जाएगा।

---

*जिस प्रकार बिन्दिया (०) जितनी इच्छा हो लिखते जायें, यदि बिन्दियों के पहले (१) न लिखेंगे तो उन बिन्दियों का कोई मूल्य नहीं। उसी प्रकार यदि प्रभु दया नामक प्रकरण न लिखेंगे तो पूर्व लिखित प्रकरण भी निरर्थक हो जायेंगे।

आज समस्त जगत् महिला समाज की ओर से इस प्रकार की आशा रखे हुए है कि वह वनिता रूप को जननी रूप में परिवर्तित करे। लक्ष्मी, सरस्वती आदि स्वरूपों के स्थान पर जगत् जननी बने। विश्व भर में स्नेह रूपी जल को प्रवाहित करने वाली वात्सल्य रूपी गंगा मैया बने।

एक समय 'जर जमीन जोरु ये तीनों हैं कजिया कलेश के छोर' ऐसा माना जाता था। परन्तु आज तो जोरु–स्त्री इतनी बलवान बन गई है कि वह जर–धन जमीन पर की जनासक्ति दूर भाग कर विश्व भर में शान्ति के पथ को सुलभ बना देगी।

नारी के हाथ में जादू है। उसके नयन कमलों में सुधा–रस है। उसके हृदय में विश्व-प्रेमामृत है, सब कुछ है। आवश्यकता है केवल उस को अवसर देने और दिलाने की। क्या नारी समाज यह सब ब्रह्मचर्य की उपासना के बिना प्राप्त कर सकेगा अथवा करा सकेगा।

जहां विवाह जैसी पवित्र वस्तु को विकृत विकार से अपवित्र, अस्पृश्य बना दिया गया है वहां आजीवन कौमार्य व्रत धारण किये बिना यह सब दावानल रूप विषाग्नि कैसे भस्मीभूत हो सकती है।

जैन साध्वी गण अधिकांश रूप में कुमारियों को बचपन में ही दीक्षा देने को तत्पर रहता है। परन्तु आधुनिक दीक्षा ऐसी कुमारियों के कौमार्यव्रत को चारदीवारी में बन्द कर सुरक्षा देती है। [illegible] समाज में बाला का पूर्ण [illegible] एवं [illegible] [illegible] ही [illegible] हो जाते है।

वर्तमान में साध्वियों की अत्यधिक आवश्यकता है किन्तु ऐसी साध्वियों की जो नर नारियों के अनुपम-चौराहे में आकर उनकी कुबुद्धि को सन्मार्ग पर लायें। समाज में और गृहस्थाश्रम में जहां चारों ओर कुटता, कुत्सा, अंधकार, और ... व्याप्त हो वहां पवित्रता, सरलता, प्रकाश तथा सर्व-व्यापकता ला दें।

इस प्रकार की ब्रह्मचारी गृहस्थ आश्रम में हो या सन्यास में परन्तु ब्रह्मचर्य की प्रतिष्ठा समस्त विश्व में व्याप्त कर दें यही प्रभु से प्रार्थना है।

—:०:—

प्रभु दया

यहां तक के प्रकरणों में जिस ब्रह्मचर्य की साधना के विषय में विविध रूप से जो कुछ कहा गया है यदि उसमें प्रभु कृपा न हो तो यह सब एक के अंक बिना की विन्दियां* के समान है।

यदि ईश्वर की कृपा होगी तो पतन की पराकाष्ठा तक पहुंचा हुआ स्त्री हो अथवा पुरुष वह भी बच जाएगा।

---

*जिस प्रकार विन्दिया (०) जितनी इच्छा हो लिखते जायें, यदि विन्दियों के पहले (१) न लिखेंगे तो उन विन्दियों का कोई मूल्य नहीं। उसी प्रकार यदि प्रभु दया नामक प्रकरण न लिखेंगे तो पूर्व लिखित प्रकरण भी निरर्थक हो जावेंगे।

विल्व मंगल चिन्ता मणि वेश्या में अत्यन्त आसक्त था। शायद किसी दृष्टि से पूर्व वर्णित स्थूलीभद्र से भी उसकी आसक्ति की सीमा कहीं अधिक थी। एक दिन वह इस के विना नहीं रह सका। मेघाच्छादित रात्रि में बाढ़ युक्त नदी के प्रवाह में भी वह अपनी प्रिया के पास जाने से न रुक सका। उसकी प्रियतमा को यह स्वप्न में भी विचार न था कि इसका विल्व मंगल ऐसे भयानक समय में भी यहां पर आएगा। वस्तुतः वह वर्षा ऋतु के प्रगाढ़ शान्त वातावरण में गहरी निद्रा में सो रही थी। उसी समय वह वहां आ पहुंचा और किस प्रकार से पानी पर तैरती हुई शव [illegible] अर्थी ही उसके लिए प्रियतमा द्वारा भेजी हुई लघु नौका सी थी। और कृष्ण वर्ण वाले फणिधर-पाश को रस्सी मान कर उसके सहारे से ही उस झरोखे पर चढ़ गया। और प्रियतमा को जगाया। चिन्ता-मणि के आश्चर्य की सीमा न रही। और साथ ही यह भी विचार आया कि इतना शक्तिशाली पुरुष मेरी इस नश्वर दुर्गन्धित काया पर कितना मुग्ध बना हुआ है। ओह, यदि यह पुरुष सत्यमार्ग पर चले तो मेरा और इसका कितना उद्धार हो। यह विचार कर वह कहने लगी "मारा वाला प्रियगुरु हवे दास तु ईशनो था" अर्थात् "मेरे प्रियतम अब तुम ईश्वर के दास बनो।" सत्य ही इस [illegible] से बिल्वमंगल को प्रतिबोध हुआ। बिल्वमंगल कामी न रह कर परम प्रभु का भक्त सूरदास बना। कहना ही पड़ेगा कि इस के निमित्त वो वेश्या ही थी।

[illegible] सीमा [illegible] आसक्ति [illegible] है किन्तु साथ ही [illegible] का भी सुपरिणाम [illegible] है।

इसी प्रकार [illegible] कवि [illegible] तुलसी दास भी [illegible] थे। [illegible] के लिए [illegible] पत्नी का विरह न [illegible]

जय। ऐसी दशा है प्रभु ! [illegible] की [illegible] [illegible] हो गया और वह [illegible] पति भी [illegible] हो गया। इस से आगे [illegible] नहीं हो और क्या है। ऐसा मोहान्ध पति को पत्नी के उपदेश.........

"हाड़ मांस और [illegible] देह में जितनी प्रीति,
उतनी हरि में होय तो छूट जाय भवभीति" ।
[illegible] निमित्त से महान् राम भक्त बन गया।

गांधी जी भी [illegible] [illegible] [illegible] स्थान में सुरक्षित रह सके थे। उनमें भी तो प्रभुकृपा के ही दर्शन होते हैं। [illegible] भी सत्य है।

प्रभु दया कैसे.........

यह भी सत्य है कि प्रभु कृपा ऐसे ही प्राप्त नहीं हो सकती है, इसके लिए पूर्व काल तथा वर्तमान काल के पूर्ण अन्तःकरण से प्रचलित सतत पुरुषार्थ की आवश्यकता है। और भी ध्येय [illegible] तत्त्व के प्रति रात-दिन श्रद्धा की भी मुख्य रूप से आवश्यकता है।

जब तक बुद्धि का, प्रभु शक्ति का, शरीर का अथवा धन का इन सब का गर्व हो तब तक प्रभु कृपा की प्राप्ति नितान्त असम्भव

प्रभु दया के लिए तो सदा नम्र तथा दीन भाव, प्रभु की प्रार्थना, हमेशा जप और सदैव शुद्ध अन्तः करणे की आवश्यकता है। है।

जो मानव संसार रूपी भवसागर को पार कर चुके हैं उन्होंने इसी की ही शरण ली है। इस प्रार्थना, जप और अन्तः करण शुद्धि

बिल्वमंगल चिन्तामणि वेश्या में अत्यन्त आसक्त था। शायद किसी दूसरे में पूर्ण शक्ति न होने पर भी उसकी आसक्ति की सीमा नहीं थी। एक दिन वह उस से मिलने चल पड़ा। मेघाच्छादित रात्रि में बाढ़ युक्त नदी के पानी में भी वह अपनी प्रिया के पास जाने से न रुक सका। उसकी प्रियतमा को यह स्वप्न में भी विचार न था कि इतना बिल्व मंगल ऐसे भयानक समय में भी यहां पर आवेगा। वस्तुतः वह वर्षा ऋतु के प्रगाढ़ शान्त वातावरण में गहरी निद्रा में सो रही थी। उसी समय वह वहां आ पहुंचा और किस प्रकार से पानी पर तैरती हुई लाश को ज्यों ही उसके लिए प्रियतमा द्वारा भेजी हुई लघु नौका सी थी। और कृष्ण वर्ण वाले फणिधर-नाग को रस्सी मान कर उसके सहारे से ही उस झरोखे पर चढ़ गया। और प्रियतमा को जगाया। चिन्तामणि के आश्चर्य की सीमा न रही। और साथ ही यह भी विचार आया कि इतना शक्तिशाली पुरुष मेरी इस नश्वर दुर्गन्धित काया पर कितना मुग्ध बना हुआ है। ओह, यदि यह पुरुष सत्यमार्ग पर चले तो मेरा और इसका कितना उद्धार हो। यह विचार कर वह कहने लगी "मारा वाला प्रियसुर हवे दास तु ईशनो था" अर्थात् "मेरे प्रियतम अब तुम ईश्वर के दास बनो।" सत्य ही इस सुप्रवचन से बिल्वमंगल को प्रतिबोध हुआ। बिल्वमंगल कामी न रह कर परम प्रभु का भक्त सूरदास बना। कहना ही पड़ेगा कि इस में निमित्त तो वेश्या ही थी।

अतः स्त्री समाज की तो इसमें अत्यधिक शोभा है किन्तु साथ ही प्रभु दया का भी सुपरिणाम था ही।

इसी प्रकार महान् हिन्दी कवि सम्राट गोस्वामी तुलसी दास जी स्वदारासक्त थे। एक क्षण के लिए भी पत्नी को पिहर न जाने

देखें। कैसी अवस्था है यह? क्योंकि एक दिन पत्नी को [illegible] जाना ही पड़ा और यह आसक्त पति भी पीछे ही जा पहुँचा। इन में स्त्री अभिचार नहीं तो और क्या है। ऐसा मोहान्ध पति भी पत्नी के प्रवचन..........

"हाड़ मांस और रुधिरमय देह में जितनी प्रीति,
उतनी हरि में होय तो कट जाये भवभीति"।
के निमित्त से महान् राम भक्त बन गया।

गांधी जी भी देखा गृह जैसे बुरे स्थान में गुरुधिकार रख, छूके पै। उसमें भी तो प्रभुदया के ही दर्शन होते हैं। बात भी सत्य है।

प्रभु दया कैसे.........

यह भी सत्य है कि प्रभु कृपा जैसे तैसे प्राप्त नहीं हो सकती है, उसके लिए पूर्व काल तथा वर्तमान काल के पूर्व प्रकरण में वर्णित प्रबल पुरुषार्थ की आवश्यकता है। और भी प्रत्येक नरत्व में अति रात-दिन श्रद्धा की भी मुख्य रूप से आवश्यकता है।

जब तक बुद्धि का प्रभु शक्ति का, शरीर का अथवा धन का इन सब का गर्व हो तब तक प्रभु कृपा की प्राप्ति नितान्त असम्भव

प्रभु दया के लिए तो सदा नम्र तथा दीन भाव, प्रभु की प्रार्थना, हमेशा जप और सदैव शुद्ध अन्तः करण की आवश्यकता है।
है।

जो मानव संसार रूपी भवसागर को पार कर चुके हैं, उन्होंने
ण ली है। इस प्रार्थना, जप और अन्तः करण शुद्ध

जैसे कुकड़-बच्चों को,
बिल्ली का सदा भय ।
वैसे ही ब्रह्मचारी को,
स्त्री-संसर्ग का भय ॥५॥

न सेवन करे बहु स्वाद,
जो करे दीप्त इन्द्रियां ।
विकार पीड़ित करे वैसे,
पक्षी फल स्वादु को जैसे ॥६॥

शृंगार चित्र भीत का,
तथा सौन्दर्य स्त्री का ।
विकारी दृष्टि से कभी भी,
ब्रह्मचारी देखे नहीं ॥८॥

नारी को मातृभाव से,
नर को भ्रातृ भाव से ।
सदैव चिन्तन करे ऐसे,
ब्रह्मचर्य अभिलाषक ॥८॥

स्त्री प्रतनित के गीत,
हास्य क्रन्दन, कूजित ।
आंख और कान से उसे,
ब्रह्मचारी नहीं भोगे ॥९॥

सिनेमा, नाटक, कितने,
दृश्य वर्धक विकार वर्धक ।
शृंगारी नृत्य और चित्र,
कभी देखे नहीं साधक ॥१०॥

न सोये एक शय्या पर,
न बैठे एक आसन पर ।

आत्मानन्द जैन महासभा पंजाब का मुख्य पत्र

"विजयानन्द" (मासिक)

क्या आप जैन धर्म, जैन संस्कृति, जैन इतिहास और जैन हित्य को सरल भाषा में जनसाधारण की समझ में आने वाला न प्राप्त करना चाहते हैं ? क्या आप जैनसमाज की विविध स्यायों और उन्हें सुलझाने के उपायों को जानने के इच्छुक हैं ? । आप दूर बैठे भी पंजाब तथा भारत के श्वेताम्बर मूर्ति पूजक ।के समाचारों से परिचित रहना अपना कर्त्तव्य समझते हैं ?

❀ तो आज ही ❀

श्वेताम्बर समाज के एक मात्र हिन्दी मासिक विजयानन्द' के ग्राहक बनने का निश्चय करलें। हिन्दी न जानने वाले ाविचों के लिए उर्दू के कुछ पृष्ठ भी अलग रहते हैं। वार्षिक य लागत से भी आधा—केवल दो रूपए। वी०पी०पी० ीं भेजा जाता। नए ग्राहकों को लगभग २०० पृष्ठ का सचित्र फ़ेस विशेषांक बिना मूल्य भेंट किया जाएगा।

प्रो० पृथ्वी राज जैन एम०ए०,
संपादक/व्यवस्थापक विजयानन्द,
४११४/२ अम्बाला शहर (पंजाब)

श्री आत्मानन्द जैन महासभा [illegible]

"विजयानन्द" (मासिक)

क्या आप जैन धर्म, जैन संस्कृति, जैन इतिहास और साहित्य का सरल भाषा में जनसाधारण की समझ में आने वाला ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं ? क्या आप जैनसमाज की विविध समस्याओं और उन्हें सुलझाने के उपायों को जानने के इच्छुक हैं ? क्या आप दूर बैठे भी पंजाब तथा भारत के श्वेताम्बर मूर्ति पूजक संघ के समाचारों से परिचित रहना अपना कर्त्तव्य समझते हैं ?

❀ तो आज ही ❀

श्वेताम्बर समाज के एक मात्र हिन्दी मासिक 'विजयानन्द' के ग्राहक बनने का निश्चय करलें। हिन्दी न जानने वाले पंजाबियों के लिए उर्दू के कुछ पृष्ठ भी अलग रहते हैं। वार्षिक मूल्य लागत से भी आधा—केवल दो रुपए। वी०पी०पी० नहीं भेजा जाता। नए ग्राहकों को लगभग २०० पृष्ठ का सचित्र कांफ्रेंस विशेषांक बिना मूल्य भेंट किया जाएगा।

प्रो० पृथ्वी राज जैन एम०ए०,
संपादक/व्यवस्थापक विजयानन्द
४११४/२ अम्बाला शहर (पंजाब)